कला में भारतीय परम्परा–मंजीत बाबा

डॉ0 सुनीता शर्मा,

असिस्टेंट प्रोफेसर–ललित कला विभाग

डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ

आधुनिक भारतीय कला परिदृश्य में 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही कलाकारों के दृष्टिकोण में क्रान्तिकारी परिवर्तन होने लगे थे। यह परिवर्तन–युगीन परिस्थितियों के अनुसार तर्क–संगत, स्वाभाविक तथा आवश्यक था। चित्र की विषय वस्तु नवीन आयाम लेने लगी तथा तकनीक व रूपाकारों में प्रयोगात्मकता आयी। आकृतिमूलक शैलियों में मानवीय दशा पर बल दिया तो यांत्रिक या ज्यामितिय शैली में 'मण्डल' परम्परा, तांत्रिक तत्वों एवं ज्यामितिय आकारों को महत्व दिया गया। भारतीय समकालीन कला में आत्मपरक दृष्टिकोण परिलक्षित हुआ, सामूहिक गतिविधि नहीं।

मंजीत बाबा की कला तीन परिवर्तनकारी स्थितियों से निर्गमित हुयी है। प्रथम स्तर पर सृजनात्मक दृश्य चित्रण तथा पशु व मानवाकृतियाँ है। दूसरे स्तर पर गाँव, गुलाबी तथा हरे रंगों के हल्के तूलिका घातों से बनी विशुद्ध आकृतियाँ हैं तथा तृतीय स्तर पर अत्यन्त सरलीकृत रूप में दो मिश्रित आकृतियों का संयोजन किया। अब आकार आपके चित्रों का महत्वपूर्ण पक्ष है जिसमें टेक्सचर का परिहार है। क्योंकि उससे संयोजन बाधित होता हैं आप सपाट पृष्ठभूमि को आकारों के घनत्व की दृष्टि से आवश्यक मानते हैं रंग चयन में दक्ष हैं तथा उत्साह एवं गहनता से रंगों को चुनते है। ये रंग बसौली शैली के समान अनुपम है। पूरक रंगों को अधिक महत्व देते हैं यथा पीले–नारंगी, नीले–बैंगनी आदि शोख रंगों में विषयांकन कर अकृत्रिम रीति से आकार रचना करते हैं। बसौली शैली से प्रभावित होते हुए भी उससे भिन्न आपके चित्रों में आकार हवा में तैरते प्रतीत होते है। दूसरी ओर बसौली शैली के सदृश मंजीत बाबा का प्रिय विषय कृष्ण व गोपियां है। कृष्ण एण्ड द डांसिंग काऊज में रूपाकारों की सरल संरचना तथा रंगों के विशाल पुंजो का प्रयोग है। मंजीत बाबा के बिम्ब ताजगीपूर्ण, स्थानीय तथा भारतीय हैं। वस्तुतः पहाड़ी लोककला व लघुकला की परम्परा से प्रेरित होकर आपने दर्शक की दृष्टि में उत्तेजना उत्पन्न करने का प्रयास किया है, आकृतियाँ बिना अस्थिपंजर चित्रित की है जिनमें लयात्मक रेखांकन, समतल रूपाकारों मुद्राओं व भंगिमाओं के माध्यम से जीवन्तता परिलक्षित होती हैं। आकृतियों के अंगों का विस्थापन भी किया है जो शारीरिक उत्परिवर्तन अथवा मूक है।

मंजीत बाबा ऐसे कलाकार थे जिनकी कला शोर नहीं मचाती परन्तु दुनिया के शोर में गुम हो चुके लोगों को थोड़ा जरूर बटोरती थी प्रकृति ने उन्हें कुछ नया करने की प्रेरणा दी।

जब वह नवयुवक थे तो अक्सर पैदल या साइकिल या किसी दूसरे वाहन की मदद ले यात्रा करते थे। वे हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, गुजरात हर जगह रहे हैं। समय–समय पर स्केच पेपर पर गायों को चित्र चित्रित करते थे रंगों व लोगों की सादगी, साधारणपन उन्हें लुभाती थी। उनके जीवन से जो कुछ जुड़ा वह उनका विषय बना जैसे कि बांसुरी। मंजीत बाबा ने बांसुरी वादन पन्ना लाल घोष से सीखा था जो एक बांसरी वादक थे। वे अपने जीवन और उत्साहपूर्ण

कलाकृतियों के द्वारा जाने जाते है। वहीं दूसरी तरफ वह अपने अध्यात्मिक प्रेम एवं सूफी दर्शन के द्वारा भी जाने जाते हैं, उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों से बहुत कुछ सीखा।

सूफी दर्शन शास्त्र ने उन्हें सिखाया कि इंसान और पशु एक साथ रह सकते है बाबा का कहना है। शेर और बकरी एक साथ क्यों नहीं रह सकते। यह देश दोनों को साथ रहने देने की जमीन देता है। इस देश का चरित्र ही सेक्यूलर है, किसी को भी इसके साथ खेलने की इजाजत नहीं दी जा सकती। अपने देश को लेकर मंजीत में एक जब्जा है, इसलिए वह अपने देश लौटकर ही नहीं आये, बल्कि अपनी कला को ठोस भारतीय पहचान देने को भी परेशान रहे। विदेशी कला की भौंडी नकल की जगह एक ठोस जातीय पहचान देने की तड़प उनमें दिखलाई पड़ती है। मंजीत आत्मा से विदेशी और दिखने में भारतीय परम्परागत कला को आगे बढ़ाना चाहते थे। राजा रवि वर्मा और अमृता शेरगित की तरह विदेशी मॉडल में देशी को ढालना उनके मिजाज में नहीं था। शायद इसलिये वह भारतीय मिनिएचरों की ओर मुड़े देशभर में घूम–घूम कर लघु चित्रों को देखा, पहाड़ी बसोहली, कागड़ा, बूंदी, किशनगढ़, अलवर और कोटा की शैलियों को बारीकी से पढ़ा, इन मिनिएचरों को मंजीत ने आत्मसात किया और तमाम विदेशी आभामंडलों को नकारते हुये सीधे अपने ही मिनिएचरों से जुड़े।

मंजीत कहते है कि अगर मिनिएचर परंपरा अभी तक चलती तो क्या होता? अगर लघुचित्रों की परम्परा का विकास रूका नहीं होता तो हमारी कला की तस्वीर ही कुछ और होती और हमें हर चीज के लिए पश्चिम का मुँह नहीं ताकना पड़ता।

यही वजह है कि मंजीत ने अपनी कला को उस परंपरा से जोड़कर आगे बढ़ाने की कोशिश की, अपनी ही जमीन से जुड़कर अपना सफर तय करना मंजूर किया, मंजीत कहते है कि मेरे दिमाग में यही था कि आज वह मिनिएचर कैसा होता, मेरी पेटिंग उसी का विकास है।

एक ठोस जातीय चेतना का ही असर था कि मंजीत मिनिएचर की ओर मुड़े, वह मिनिएचर की तरफ ही नहीं गये बल्कि मिथक की तलाश में भी निकले, मिथक और मिनिएचर के बिना मंजीत बाबा के कलाकार की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

कृष्ण से अभिभूत हैं मंजीत, कृष्ण की ढेरों छायाएं उनके कैनवस पर मौजूद हैं। उनके 'परपल पाइपर' को भुलाया नहीं जा सकता, ऐसे ही गायों को बांसुरी की तान सुनाते कृष्ण को कौन भूल सकता है। फिर गोपियों से घिरे कृष्ण, गोपियों से घिरी गाएं और गायों से घिरी गोपियां,

सिर्फ कृष्ण ही नहीं देवताओं से भरी है। उनके कैनवास, शिव, दुर्गा और धर्मराज को आप देख सकते हैं। धर्मराज की पीठ पर बैठे त्रिमूत्रि देवता का अपना ही मोहक सौन्दर्य है। लेकिन ये सब देवता कैलेंडर कला की चीज नहीं हैं। ये मंजीत का सृजन है। उसे कोई भी पहचान सकता है। मंजीत अपने अभिव्यक्ति को अपनी सोच के माध्यम से खास रंगों में पेश करते है।

देवताओं के आलावा मंजीत की एक खासियत पशु–पक्षियों की उनके कैनवास पर जीवन्त मौजूदगी है, जिसमें उनका आकार बेहद निराला है। वह एक उंगली पर बैठा तोता, शेर की पीठ पर देवता, कुत्ते, बिल्ली, कबूतर, गाय और बिलकुल अभी अपने आखिरी दौर में शेर और बकरी को चित्रित करते रहे। पशु–पक्षियों से गजब का रिश्ता है, गाय से तो कुछ खास ही लगाव है उन्हें, उनके कैनवस पर गाय कई–कई रूपों और संदर्भों में आती है, शायद ही किसी ने गाय को इतनी आत्मीयता से देखा और उकेरा हो। गाय की बात पर कहते है गाय तो हमारी माँ जैसी रही है। उससे रिश्ता ही कुछ और रहा है, बचपन में सीधा थन से ही मुँह लगाकर दूध पी

जाता था। दिल्ली में बहुत सालों तक हमारे यहाँ गाय रही, आज भी गाय की कमी महसूस करता हूँ।

मंजीत का जन्म अमृतसर के बैरवाल गाँव में हुआ था, यह 1941 की बात है बकौल मंजीत अनका जन्म गौशाला में ही हुआ था, पिता का टिंबर व्यापार था, लेकिन वह गाँव भर में पुराणिक या वाचक या गायक की तरह मशहूर थे।

कला के प्रति रूचि मंजीत को अपने घर से मिली, हालांकि उनके घर कोई चित्रकार नहीं था, लेकिन पिता को नौटंकी का बेहद शौक था, वह बांसुरी और माँ ढोल पर गजब की थाप देती थी बहन सितार बजाती थी इन्ही सबके बीच उनके कलाकार मन ने अपनी जड़ तलाशी। पंजाब में ही मंजीता का जन्म ही हुआ था लेकिन वह तीन साल के ही थे कि दिल्ली आ गये, करोलबाग में आकार वह रहे, उसके बाद दिल्ली ही उनका अपना शहर रहा।

मंजीत के भीतर एक सूफी बैठा हुआ है। वह चाहे इंपीरियल होटल के एक कोने में अपनी पेटिंग कर रहे हों या भारत भवन के रूपंकर विभाग की निदेशिकी कर रहे हों, या यों ही पहाड़ो पर घूम–घूमकर लोगों से मिल रहे हैं, उनके चाल–चलन और बात व्यवहार में कोई खास फर्क नहीं आता, चितेरे मंजीत का सूफी से बेहद लगाव है। शेख फरीद और बुल्ले शाह के वह मुरीद हैं। शाह अनायत और वारिस शाह की पंक्तियां उन्हें यो ही याद है। अपने दोस्त कलाकार मदन गोपाल के साथ 'हीर' गाना उन्हें बहुत अच्छा लगता है। सूफी कलाम व खासा गाते है, पेटिंग के आलावा मंजीत का यह सबसे बड़ा शौक है।

घुमक्कड़ी मंजीत के मूड में है, वह टिककर बैठ नहीं पाते, शायद इसलिये उन्हें खोजना आसान नहीं होता, शायद इसलिये वह भारत भवन के रूपंकर की निदेशकी से आजिज आ गये हैं, लेकिन घुमक्कड़ी ने मंजीत को मंजीत बाबा बनाया है। मंजीत की मस्ती की वजह भी शायद यही है। बाबा की मृत्यु 29 दिसम्बर 2008 में हुयी।

कला समीक्षक उमा नायर के अनुसार बाबा कला में नव अंदोलन का हिस्सा थे, रंगों की उनकी समझ अद्भुत थी, उन्होंने भारतीय समकालीन कला को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर ख्याति दिलाने का जो काम किया है। उसे कला जगत में हमेशा याद किया जायेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. समकालीन भारतीय कला, ममता चतुर्वेदी।
2. दैनिक जागरण (सप्तरंग), राजीव कटारा 1998
3- TheArt of Modern India – Balraj Khanna, Aziz Kurtha

Copyright © 2017, Dr. Sunita Sharma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.